सेवा का महत्व

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

सेवा का क्षेत्र बहुत बड़ा है। सेवा सनातन कालिन धर्म है। सेवा ऊँच–नीच, छोटा–बड़ा, अगड़ा–पिछड़ा सबके भेद को समाप्त कर देती है। सेवा स्वयं का समर्पण है और ज्ञान का सबसे बड़ा फल है। ज्ञानी होने का तात्पर्य यह नहीं है कि मानव में अहंकार आ जाये। बल्कि ज्ञानी होने का सबसे बड़ा फल विनम्रता है। सेवा दो प्रकार की है। पहली सेवा हम संसार में आकर परस्पर एक–दूसरे की सेवा करते है और दूसरी सेवा आत्मकल्याण की है। हमारा भौतिक जीवन समाज में व्यतीत होता है। समाज पारस्परिकता का ऐसा ताना–बाना है जिसमें सम्पूर्ण प्राणी एक–दूसरे में गूथे हुये है। इस ताने–बाने को सेवा रूपी सूत्र के द्वारा बांधकर एक माले की तरह रखा गया है। सेवा ही एक ऐसा व्रत है जिसका पालन करने से मनुष्य दीर्घायु को प्राप्त करता है। अतः निष्काम भाव से सेवा करनी चाहिए। जो व्यक्ति जहां भी रहता है वहां उसे सेवा के द्वारा उच्च पद को प्राप्त करना चाहिए। प्राचीन काल में शिष्य गुरू के आश्रम में जाकर अपनी सेवा के द्वारा उन्हें प्रसन्न कर शिक्षा प्राप्त करता था और शिक्षा से अपने जीवन का निर्माण करके राष्ट्र का निर्माण करता था। हमारे सामने अनेक उदाहरण ऐसे है जिनको देखकर और जीवन में उतारकर हम राष्ट्र निर्माण कर सकते है। वैदिक काल से लेकर आजतक के साहित्य का आलोडन–विलोडन करने पर ज्ञात होता है कि भारतीय साहित्य सेवा के उत्कृष्ट दृष्टांतों से भरा पड़ा है। पांचों पांडवों ने अपनी सेवा के द्वारा ही गुरू द्रोणाचार्य से अस्त्र–शस्त्र विद्या सिखी थी। इसी प्रकार श्रवणकुमार की अपने माता–पिता की सेवा का दृष्टांत हमारे सामने उपस्थित है। सेवा कार्य को अपना धर्म समझकर के करना चाहिए। आचार्य को अपने शिष्य को विद्या अपना धर्म समझकर देना चाहिए और शिष्य को अपना कर्त्तव्य समझकर के विद्या ग्रहण करनी चाहिए। हमने आचार्य से विद्या ग्रहण की है। इसलिए आचार्य की सेवा करे यह उचित नहीं है। क्योंकि आचार्य अपना कर्त्तव्य समझकर के विद्या दान करता है। इसी प्रकार सेवा के अनेक क्षेत्र है। सीमा की रक्षा के लिए खड़ा होने वाला प्रहरी अपना कर्त्तव्य समझकर के देश की रक्षा करता है। वह प्राणों की प्रवाह नहीं

करता। करो या मरो का दृष्टांत उसके सामने रहता है जिस समय वह अपने कर्त्तव्य का निवर्हन कर रहा होता है तो वह प्राणों की परवाह नहीं करता। चिकित्सालयों में जब कोई बीमार आदमी जाता है तो चिकित्सक का यह कर्त्तव्य है कि उसकी पूरी सावधानी के साथ चिकित्सा करे। इसी प्रकार सेवा धर्म बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। जब कोई अंधा आदमी सड़क पार कर रहा होता है तो हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम उसे आसानी से सड़क पार कराये जिससे वह अपने गंतव्य तक जा सके। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति रेलवेस्टेशन अथवा बस स्टैंड पर अपने सामान को ले जाने में असमर्थ रहे तो हमारा यह कर्त्तव्य रहता है कि हम उसे आवश्यकतानुसार सेवा देकर के संतुष्ट कर सके। मदरटेरेसा का नाम कौन नहीं जानता। इस महिला ने स्वयं और संगठन के सहयोग से लूले–लंगड़े, अंधे, मूक, वधिर तथा असहाय लोगों को सहायता देकर सेवा का एक ऐसा अनुठा दृष्टांत प्रस्तुत किया जो सबके लिए प्रेरणादायक है। उसकी सेवा भावना से प्रभावित होकर सरकार ने भारत रत्न की उपाधि से विभूषित किया। इसी प्रकार अनेक ऐसे सामाजिक संगठन है जिनका कार्य देश की सेवा में याद किया जाता है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के लोग बाड़, सूखा, आपदा इत्यादि में निःस्वार्थ भाव से देश की सेवा करते है। हमारे देश में बहुत से नान गवर्नमेंट आर्गेनाइजेशन राष्ट्र की सेवा के लिए विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रहे है। देश पर जब कोई आपदा आती है तो इस प्रकार के संगठन देश के लोगों की सेवा में रातों–दिन तत्पर रहते है।

सेवा के क्षेत्र में देवऋण, गुरुऋण, पितृऋण और समाजऋण का भी उल्लेख आवश्यक है। देवऋण ऐसा ऋण है जिसे मानव देवताओं के प्रति सम्मान की भावना, पूजा, अर्चन, स्तुति, यज्ञ, यागादि कार्यों को करके उतारता है। गुरू के प्रति उपनत बुद्धि से मानव को तत्पर रहना चाहिए। गुरू शिष्य को संसार की वास्तविकता से परिचित कराता है और उसके ज्ञानरूपी नेत्र खोलकर उसका जीवन प्रसस्त करता है। गुरू का स्थान ईश्वर से भी बड़ा है क्योंकि गुरू ईश्वर का ज्ञान कराता है। इसलिए हमारा गुरू के प्रति कर्त्तव्य है कि गुरू की सेवा सुश्रूषा अनिवार्य रूप से करे। माता–पिता पुत्र को जन्म देते है। उसका लालन–पालन करके पूर्ण मानव बनाते है। इसलिए पुत्र का कर्त्तव्य है कि वह माता–पिता की सेवा करे। पुत्र को जन्म देने में माता को असहनीय वेदना होती है। फिर भी वह अपने पुत्र से प्रेम करती है और अपना

स्तनपान कराकर के उसे बड़ा करती है। इस ऋण को सैंकड़ों जन्म में भी नहीं उतारा जा सकता। जिस समाज में हम रहते है वह समाज हमे एक पहचान देता है। समाज का ताना–बाना मनुष्यों से बना हुआ है। समाज में न केवल मनुष्य अपितु अनेक जीव–जन्तु रहते है। सभी जीव–जन्तुओं को प्राण उतना ही प्रिय है जितना की मनुष्य को। जीयो और जीने दो की भावना से प्रेरित होकर मानव को सबके साथ व्यवहार करना चाहिए। इसके अतिरिक्त आत्म कल्याण के बारे में भी मनुष्य को चिन्तन करना चाहिए। आत्मा सभी जीवों में है। जैसे सूर्य एक स्थान पर स्थित होकर सबको प्रकाश देता है वेसे ही आत्मा सभी प्राणियों को प्रकाशित करती है। अतः आत्म कल्याण और परकल्याण का चिंतन सभी मनुष्य को करना चाहिए।